लू

मो. आरिफ

लू

https://www.hindiadda.com/loo/

यह कहानी मैंने रतन सिंह चौहान के मुँह से सुनी थी। चौहान मेरे करीबी तो नहीं थे पर जब मैं मुंबई में था तो कभी-कभार कांदीवली स्थित उनके दो खोली वाले फ्लैट पर जाना होता था। कारण था मेरा मित्र मिश्र जो चौहान का पड़ोसी था। दोनों पुलिस में थे और दोनों में खूब छनती थी।

उस दिन चौहान ने दारू पी रखी थी। उसकी पत्नी भी घर पर नहीं थी। वह पूरे मूड में थे। अपने उत्तर प्रदेश दौरे से बस लौटे ही थे। तभी उन्होंने यह कहानी संदीप को सुनायी थी। वहाँ मैं भी था। मुझे कहानी सच्ची और मजेदार लगी थी। इसलिए बड़ी आसानी से मस्तिष्क के एक कोने में ठहर गयी। सच्ची इसलिए कह रहा हूँ कि सुनने में आता है कि पुलिस वाले आपस में झूठ नहीं बोलते हैं। और मजेदार?... आप खुद ही देख लीजिए।

इन्स्पेक्टर चौहान सादी वर्दी में थे। हाथ में एक कामचलाऊ बैग था। मुंबई-हावड़ा एक्सप्रेस से उतरते ही वे बस स्टैंड पहुँचे थे। सड़क मार्ग से उन्हे बेलागंज पहुँचना था और फिर वहाँ से इस्लामपुर गाँव। ट्रेन यात्रा कुल मिलाकर आरामदायक रही थी और उनके चेहरे पर थकावट के कुछ खास चिह्न नहीं थे। पर मई की इस कड़ी गर्मी में बेलागंज पहुँचते-पहुँचते वे जरूर थक जाएँगे और अगर यह कहा जाए कि इस्लामपुर पहुँचते-पहुँचते वे थककर चूर हो जाएँगे तो कोई बड़ी बात न होगी। ऐसे में वे उत्तर प्रदेश इससे पहले भी एक बार आ चुके थे पर इस बार की बात और थी।

इलाहाबाद से बेलागंज 85 किलोमीटर और उसके आगे इस्लामपुर गाँव - 6 किलोमीटर मुख्य मार्ग से अंदर। यों तो साढ़े सात बजे सुबह बस उन्हें मिल गयी पर जिस रफ्तार से बस चल रही थी और जिस प्रकार बीच-बीच में रोककर सवारियों को उतार-चढ़ा रही थी, चौहान ने महसूस किया कि अगर दिन के एक बजे तक भी वे बेलागंज पहुँच जाएँ तो कोई विशेष देर नहीं मानी जाएगी।

उन्होंने माथे का पसीना पोंछा और जेब से अपनी मंजिल के डिटेल्स को एक बार फिर निकालकर देखा। इस्लामपुर छह किलोमीटर। पर्चे में दिशा-निर्देश अंकित था। बेलागंज उतरकर तिराहे चौक पहुँचना है और वहाँ से इक्का या रिक्शा पकड़कर इस्लामपुर। बेलागंज और इस्लामपुर के बीच कच्ची सड़क है और उस सड़क पर एक प्राइवेट बस भी चलती है पर उसका समय टेढ़ा है। सुबह इस्लामपुर के आगे डुमरा बाजार से बेलागंज आती है, शाम को बेलागंज से डुमरा बाजार लौटती है। रास्ते में इस्लामपुर यात्री उतर जाते है। पर अधिकतर यात्री बस और रिक्शा की अपेक्षा

बेलागंज से इक्के पर जाना पसंद करते हैं। रिक्शा महँगा पड़ता है जबकी बस देर शाम को जाती है।

इन्स्पेक्टर चौहान को यात्रा का यही अंतिम चरण थका रहा था। ऐसी गर्मी! उस पर भीड़ भरी बस की कमरतोड़ यात्रा... तिस पर छह किलामीटर की इक्का सवारी।

चौहान का अनुमान सही था। एक-डेढ़ बजे कहीं जाकर बस बेलागंज पहुँची। उन्हें बाजार से तिराहे चौक तक की दूरी पैदल ही तय करनी पड़ी। चौक पर मरघटी सन्नाटा था। एक बजे की दोपहरी में वहाँ मानो जीवन कुछ घंटो के लिए पलायन कर गया था। मोड़ पर छप्पर के नीचे एक चाय की दुकान थी। छप्पर के ठीक बाहर शीशम के पेड़ के नीचे रखी मरियल बेंच पर चायवाला सो रहा था। उसकी नंगी पीठ पसीने से तर थी और उसके मुँह पर मक्खियाँ भिनभिना रही थीं।

इन्स्पेक्टर चौहान ने अपने बैग से छोटा-सा तौलिया निकाला और पसीना पोंछने लगे। माथा, गर्दन, सीना और दोनों होथों पर तौलिये को बार-बार रगड़ने के बाद उन्होंने इधर-उधर नजर दौड़ायी। न वहाँ रिक्शा था न ही न ही कोई इक्का-ताँगा। प्यास के मारे उनका बुरा हाल था। कोने में रखी बाल्टी से उन्होंने लोटा भर पानी पिया। फिर एक लोटा और पिया। अब तक चाय वाला भी जग चुका था। उसने बताया कि इस्लामपुर जाने के लिए चार बजे से पहले कोई सवारी नहीं मिलेगी।

इस चिलचिलाती धूप मे... इस लू में अभी कोई समाधन नहीं मिलने वाला। इन्स्पेक्टर की चिंता बढ़ गयी। उन्हें तो इस्लामपुर सिर्फ जाना ही नहीं था, वापस भी आना था और फिर बेलागंज से इस्लामपुर के लिए आखिरी बस साढ़े चार बजे ही थी। बेलागंज में दो-तीन घंटे लगने ही थे। वैसे आवश्यकता पड़ने पर रात बेलागंज थाने में बितायी जा सकती थी पर गर्मी का आलम यह था कि उन्हें महाराष्ट्र की याद अभी से सताने लगी थी। वे जल्दी से काम निबटाकर लौटना चाहते थे।

ऐसा कम ही होता है कि जो आप सोचें वही हो जाए। पर इस समय वही हो गया जो इन्स्पेक्टर चौहान परेशान खड़े सोच रहे थे। एक खाली रिक्शा इस्लामपुर के रास्ते से आता दिखाई पड़ा। चौहान तेज कदमों से आगे बढ़े कि कहीं कोई और न रिक्शे पर चढ़ जाए।

"इस्लामपुर चलता है।" कहते हुए इन्स्पेक्टर चौहान रिक्शे पर बैठ गये।
"रुकिए-रुकिए साहेब, तनी सुस्ताने दीजिए। ...दम लेने दीजिए भाई, तबै न चलेंगे।" रिक्शे वाला पसीना पोंछने लगा। फिर वह पेड़ के नीचे बैठ गया।

"इस्लामपुर यहीं नहीं है मालिक। हमारे गाँव से भी दो किलामीटर और आगे है। साँझ को इक्का, बस सब मिलेगा। उसी से जाइए। हम चलेंगे तो, पर घंटा भर बाद। दूसरे अभी बोहनी भी नहीं हुई है। पैंतीस रुपया लगेगा रिजर्व का।"

इन्स्पेक्टर चौहान ने कहा कि इस्लामपुर अभी चलना है। एक घंटे में वापस भी आना है। आने-जाने का साठ दे देंगे और अगर समय से पहुँचा दिया तो पंद्रह रुपये इनाम के अलग से। रिक्शेवाला दिखावटी ना-नुकुर के बाद तैयार हो गया।

"मालिक, हुड गिरा लीजिए और कान से तौलिया लपेट लीजिए। गरम हवा में झुलस जाइएगा। लू ने थप्पड़ मार दिया लो इस्लामपुर पहुँचने से पहले ही टें हो जाइएगा।" रिक्शेवाला बोलकर हँसने लगा।

"चलो,चलो।" इन्स्पेक्टर चौहान बोले और हुड गिरकर सिर पर पसीने से भीगा हुआ तौलिया इस प्रकार डाल लिया जिससे कि उनके गाल और कान गरम हवाओं से सुरक्षित हो गये।

"बाहरी हैं?" रिक्शेवाले ने पूछा।

"हाँ, मुंबई।" चौहान ने संक्षिप्त-सा जवाब दिया और तौलिये को आगे खींचकर सिर को और अच्छी तरह ढक लिया। शरीर को पिघला देने वाली लू बह रही थी।

"यहाँ कैसे मालिक, इस गाँव-खेड़ा में? वहाँ से इतना दूर, इस गर्मी में?"

"हमारे एक दोस्त रहते हैं उन्हीं से मिलने।" इन्स्पेक्टर चौहान ने असली मकसद बताना ठीक नहीं समझा।

"जरा बढ़ा लो, लौटना भी है। अभी और कितना है?"

"अभी... अभी तो तीन किलोमीटर ही आये हैं... एक डेढ़ घंटा लगेगा और।"

इन्स्पेक्टर चौहान चुप हो गये। सोचा, रिक्शेवाले को ज्यादा क्या बोलें। चला तो ठीक रहा है। बेचारा पसीने से लथपथ है पर बढ़ा जा रहा है। इन्स्पेक्टर चौहान को जीवन में ऐसी गर्मी से सामना नहीं पड़ा था। ऐसी बन-बिगड़ रहे थे। एक भुतैले हवा के गोले ने अचानक उनके रिक्शे को घेर लिया। लगा रिक्शे समेत उन्हें उड़ाकर ले जाएगा। किसी तरह जान बची।

वे बार-बार हुड को आगे की ओर खींच रहे थे। अपने तौलिये को कसकर लपेटे हुए थे पर उनके पास चिलचिलाती धूप और प्रचंड गर्म हवा का कोई जवाब नहीं था।

उनका गला सूखने लगा था... उन्हें जोरों की प्यास लग रही थी... सिर भारी हो रहा था...। उन्होंने रिक्शेवाले से कहीं रोकने के लिए कहा, जहाँ पानी मिल सके। कुछ देर चलने के बाद एक आम के बाग के पास उसने रिक्शा रोक दिया। पास के घर से दौड़कर पानी ले आया। इन्स्पेक्टर गटगट दो लोटा पानी पी गये और बाल्टी में बचे बाकी पानी को सिर, मुँह, हाथ और पैर पर उड़ेल लिया। उनका चेहरा लाल पड़ गया था। आँखों में जैसे काँटे चुभ रहे थे। सिर फट रहा था। शरीर तपने लगा था। आग की माफिक। पोर-पोर से जैसे लावा फूट रहा था। पानी से विशेष फायदा नहीं हुआ। लू ने अपना काम कर दिया था।

रिक्शेवाले ने अपना अँगोछा वहीं पेड़ के नीचे बिछा दिया। रिक्शे की सीट निकालकर तकिया बनाया और अपने परदेसी पैसेंजर को लेट जाने के लिए कहा। इन्स्पेक्टर चौहान को वाकई आराम चाहिए था। वे लेट गये। आँखे बंद किये लेटे रहे। उनकी रिवाल्वर पीठ के नीचे आ रही थी। उन्होंने रिवॉल्वर को हाथ से हटाया। रिवॉल्वर देखकर रिक्शेवाला चौंका। कुछ देर तक घूरता रहा फिर अँगोछे के कोने से उसे ढकते हुए उनके सिर को सहलाने लगा। फिर उसने चौहान के जूले को उतारकर उने तलवे को धोया और पैंट को थोड़ा ऊपर की ओर मोड़ दिया।

उन्हे आराम मिला। वे आँखें खोलकर धीरे-धीरे उठ बैठे और घड़ी पर नजर डाली।

"मालिक थोड़ा और सुस्ता लें तो चलें। हम तो आपकी दशा देखकर डर गये थे। परदेसी आदमी हैं। इस लू-धूप में यहाँ जंगल में कहाँ फँसे आप!"

इन्स्पेक्टर चौहान ने फिर से आँखें मींच लीं। उन्हें वाकई आराम मिल रहा था। ढाई बजने को थे पर लगता था उस बाग के बाहर चारों ओर आग की लपटें निकल रही हों। थोड़ी देर बाद उन्होंने आँखे फिर खोंली, बैठे, और फिर खड़े हो गये।

"चलो।" उन्होंने धीरे से कहा। पूरी तरह आश्वस्त होने के बाद कि उसका पैसेंजर ठीक-ठाक है, रिक्शेवाले ने हुड ठीक किया, इन्स्पेक्टर चौहान को तौलिया अच्छी तरह से लपेटने के लिए कहा और रिक्शा खींचने लगा।

"अभी कितनी दूर है?" चौहान ने कमजोर-सी आवाज में पूछा। फिर बोले, "शरीर अभी भी बहुत गरम लग रहा है।"

"अभी तो आधा भी नहीं आये हुजूर। और अपकी तबीयत भी खराब लग रही है। आप जल्दी से आम का पना पी लें तो सब ठीक हो जाएगा।"

"आम का पना? ये क्या होता है? ऐसा करो... स्पीड बढ़ा लो। लौटना भी है।"

"लौटना भी है? अभी तो पहुँचे भी नहीं...।"

इन्स्पेक्टर चौहान चुप हो गये। सिर और मुँह ढाँके बैठे रहे। रिक्शेवाले ने स्पीड बढ़ा दी थी। दो किलोमीटर और कवर करने के बाद वह हाँफने लगा। स्पीड खुद-ब-खुद स्लो हो गयी। उसने पीछे मुड़कर देखा। चौहान मुँह ढाँके बैठे हुए थे।

"मालिक, अपको पना की जरूरत है। नहीं तो तबीयत और बिगड़ जाएगी। पना आम को आग में भूजकर उसके रस से बनाते हैं। गर्मी और लू का दुश्मन है पना।"

"कहाँ मिलेगा?" वे धीरे से बोले।

"देखिए मालिक। आपके दोस्त के घर पहुँचते-पहुँचते तो आपकी तबीयत और बिगड़ जाएगी। मेरा घर बस आने वाला है। इस्लामपुर से बहुत पहले ही पड़ता है। कहिए तो जल्दी से पना पिलवाता चलूँ। तुरन्त चंगे हो जाएँगे हुजूर।"

"अगर रास्ते ही में है तो ठीक है। देर न लगाना।"

"ये बात हुई न! टब देखिए कैसे जल्दी से आप चंगे हो जाते हैं। बस आधा किलोमीटर और।"

"तुम्हारा नाम क्या है?" इन्स्पेक्टर चौहान ने पूछा।

"मालिक हाँ, इसी तरह बातचीत करते चलें तो मन ठीक हो जाएगा। हम लोगों को तो यह लू-धूप कुछ ही नहीं करता। बारह महीने रिक्शा खींचते हैं। गर्मी में बस पना पीकर घर से निकलते हैं। हाँ, हमारा नाम जोगी है... जोगी पासवान। बेलागंज से इस्लामपुर तक सभी जानते हैं जोगी को।"

"अच्छा!" चौहान ने उसे सहारा दिया। उसने बोलना जारी रखा।

"मालिक, सात तक पढ़कर छोड़ दिये हैं। पैंट-शर्ट पहनकर रिक्शा चलाते हैं। फैशन में कोई कमी नहीं करता है जोगी पासवान। चलिए न, आपको पना पिलाएँगे और

अपना काला चश्मा भी ले लेंगे। गर्मी में आँखें बची रहेगी तो खूब रिक्शा चलाएँगे... अच्छा, एक बात बताएँ...?"

"क्या?"

"हमें पता चल गया आप अपने दोस्त के घर नहीं जा रहे हैं। आप राजकुमार सिंह के चक्कर में जा रहे हैं। आपका रिवॉल्वर देख लिये हैं हम... पुलिस के आदमी हैं न आप! छह महीने पहले भी सादी वर्दी में एक इन्स्पेक्टर साहब आये थे - हम ही इस्लामपुर तक पहुँचाए थे उनको। पर नहीं धर सके थे ससुरा को। बताते थे लंबा इनाम है उसके ऊपर। किसी को टपका आया है मुंबई में। जाइए-जाइए। इस बार शायद हाथ लग जाय...। शायद हजारों रुपये का इनाम आपको बदा हो। पर एक बात का ध्यान रखिएगा - इस्लामपुर अपराधियों का गाँव है। अकेले जाना ठीक न होगा। पुलिस से डरते नहीं ऊ लोग। पिछले इन्स्पेक्टर साहब का रिवॉल्वर छीनकर उन्हें बैरंग लौटा दिया था। ऐसा करें, हमारे यहाँ रात में आराम करें - सुबह लौट जाएँ। रिपोर्ट में लिख दीजिएगा ससुरा नहीं मिला।"

"बहुत तेज आदमी है तू जोगी पासवान। ...अगर रिक्शा नहीं चला रहा होता तो पुलिस में भर्ती हो सकता था। पुलिसिया दिमाग है तेरा...।"

दोनों हँसने लगे।

जोगी पासवान का घर आ गया था। उसने रिक्शे को सामने खड़े नीम के पेड़ के नीचे रोका और उतरकर पसीना पोंछने लगा। इन्स्पेक्टर चौहान रिक्शे पर ही बैठे रहे। जोगी दौड़कर एक खटिया उठा लाया और बोला - "लेट जाइए ठंडे में। बस दो मिनट में पना तैयार। और यहाँ ठीक नहीं लग रहा है तो चलिए अंदर... वहाँ ठीक रहेगा... हाँ-हाँ, कच्चा मकान है... ठंडा है... वहीं लेटिए... सब लू-धूप एक मिनट में रफ्फूचक्कर... धनिया, तनी पना दे झट से तो... हमारे लिए नहीं... अरे भाई हम तो अभी पी के निकले ही हैं... इनके लिए... हमारे इन्स्पेक्टर साहब' के लिए... मुंबई से यहाँ आये हैं लू खाने... पहले ठंडा पानी दे दे...।"

धनिया पानी लेकर आयी। इन्स्पेक्टर चौहान ने धनिया से पानी लिया, पिये और वहीं ओसारे में रखी खटिया पर लेट गये। धनिया चली गयी। धनिया फिर आयी। पना लेकर। चौहान ने धनिया से पना लिया और पीने लगे। धनिया खड़ी रही। पना अच्छा लग रहा था। तबीयत अच्छी हो रही थी। धनिया अच्छी लग रही थी। सब अच्छा लग रहा था। धनिया चली गयी। तबीयत फिर बिगड़ने लगी। धनिया वापस

आयी। गुड़ लेकर। गुड़ मीठा था। पानी ठंडा था। धनिया अच्छी थी। पना चटकदार था।

धनिया फिर चली गयी।

अब इन्स्पेक्टर चौहान को इस्लामपुर पहुँचने की जल्दी नहीं थी। धनिया फिर आयी लेकिन वह सोते जैसा लग रहे थे

साँझ ढले इन्स्पेक्टर चौहान की आँख खुली। जोगी पासवान उनका पैर सहलाते बैठा था। चौहान ने कहा, "पना अच्छा था। एक गिलास और।" जोगी ने कहा "देर हो जाएगी, इस्लामपुर अभी भी दो किलोमीटर है। हुजूर जल्दी करें।" इन्स्पेक्टर चौहान नाराज होकर बोले, "मेरी तबीयत का खयाल नहीं। अब मैं और रिक्शेबाजी नहीं कर सकता। सुबह देखेंगे। ऐसे भी इस्लामपुर जाकर खतरा मोल लेना ठीक नहीं है। साठ की जगह अस्सी ले लेना। आज रात यहीं रुक जाने दो। और ये लो पैसे। कहीं से मुर्गा और एक बोतल का इंतजाम करो। न हो तो बेलागंज से जाकर ले आओ।"

जोगी बोला, "मालिक, मैं तो पहले यही कह रहा था कि इस्लामपुर न जाएँ।" वह फिर धनिया से मसाला पीसने के लिए बोलकर भागा।

मसाला पीसकर धनिया बाहर आयी। चौहान ने उसकी ओर सौ रुपये का नोट बढ़ाते हुए कहा, "यह तुम्हारा इनाम है। पना पिलाने के लिए, गुड़ खिलाने के लिए, तबीयत कुछ-कुछ ठीक करने के लिए।" धनिया लजायी, सकुचायी और नोट लेकर अंदर को भागी। धनिया फिर आयी। कटोरे में दही लिये। दही मीठी थी। मलाईदार थी। धनिया खड़ी रही। चौहान दही चाटते रहे। धनिया चली गयी। दही खट्टी हो गयी। धनिया फिर आयी। दही मीठी हो गयी।

धनिया बोली, "पानी भर दिया है, नहा लो। तबीयत पूरी ठीक हो जाएगी।" नहाना तो था ही, नहा लिया। पर तबीयत पूरी तरह ठीक न हुई। अब मुर्गे का इंतजार था, बोतल का इंतजार था, थके-हारे जोगी का इंतजार था, रात का इंतजार था।

चौहान ने ज्यादा मुर्गा खाया, थोड़ा दारू पिया। जोगी ने थोड़ा मुर्गा खाया ज्यादा दारू पिया। धनिया ने न दारू पिया न मुर्गा खाया। वह भूखी थी, वह प्यासी थी। जोगी पी-पी कर अघा गया। फिर वहीं नीम के पेड़ के नीचे लुढ़क गया। रात आने लगी। लू चलने लगी। गर्मी बढ़ने लगी। चौहान ले धीरे-से धनिया से कहा, "पना बनाओ।" धनिया ने पूछा, "आम का या निबूड़ा का?" चौहान ने कहा, "जो-जो फल हों सब का

बनाओ।" धनिया बोली, फल तो सारे हैं पर अकेले सब कैसे बना पाऊँगी। मदद करो।" चौहान बोले "क्या मिलकर बनाएँगे।" धनिया बोली, "हाँ। अंदर आँगन में। मैं बनाऊँगी तुम पीना। फिर तुम बनाना मैं पिऊँगी। फिर दोनों बनाएँगे दोनों पिएँगे। साथ-साथ। एक साथ।"

रात तीन बजे कहीं जाकर दोनों की आँख लगी।

इन्स्पेक्टर चौहान सुबह-सुबह ही चलने के लिए तैयार हो गये। जोगी पासवान रिक्शा साफ करते-करते बोला, "कुछ मुँह में डाल लीजिए मालिक, तब निकलिए। फिर बीमार पड़ जाएँगे"

"सुनो, ये लो अस्सी रुपये। मुझे जल्दी से बेलागंज पहुँचाओ। वहाँ पहुँचकर खा लेंगे। देर करने से फिर धूप बढ़ जाएगी। धूप से मुझे बहुत डर लग रहा है। आगे अभी बहुत दूर जाना है और ये लो पंद्रह रुपये, तुम्हारा इनाम। बड़ी सेवा की तुमने हमारी... अपने भाई के माफिक।"

"एक काम तो अच्छा किये मालिक आप कि राजकुमार के चक्कर में नहीं पड़ रहे हैं। लौट के बाल-बच्चों में जाइए। सरकारी इनाम पाने का टाइम फिर आएगा। तबीयत ठीक रहेगी, रिवाल्वर बचा रहेगा, तो बहुत इनाम मिलेगा। और हाँ, एक काम अच्छा किये तो अब एक काम खराब करने जा रहे हैं... हमारा इनाम और हमारी मजूरी अभी यहीं काहे दे रहे हैं, पहले बेलागंज पहुँचिए आराम से... तब ही लेंगे।"

चौहान ने रुपयों को अपनी जेब में रखा, मुस्कुराये और बिना कोई जवाब दिये रिक्शे पर बैठ गये। जोगी पासवान ने अपना काला चश्मा आँखों पर लगाया, आस्तीन चढ़ाया और रिक्शा खींचने लगा।

रिक्शा दौड़ रहा था। चौहान का मन भी दौड़ रहा था। चौहान बेचैन थे। फिर जोगी ने अपना राग छेड़ दिया। चिल्ला-चिल्लाकर गाने लगा। 'चलत मुसाफिर मोह लियो रे, पिंजड़े वाली मुनिया...।'

चौहान को बिल्कुल नहीं अच्छा लग रहा था। साले चुप हो जा। यही बोलना चाहे पर बाले नहीं। वे बहुत-सी बातें एक साथ सोच रहे थे। बीस हजार इनाम के बारे में सोच रहे थे। रिवॉल्वर के बारे में सोच रहे थे। राजकुमार सिंह के बारे में सोच रहे थे। जो सोच रहे थे वह बोलना नहीं चाह रहे थे। जो बोल वह उसकी सोच में नहीं था।

"तेरी घरवाली अच्छी है।" उन्होंने कहा।

"अच्छी लगी मालिक।" जोगी पूछने के अंदाज में तपाक से बोला।

चौहान चुप हो गये। बातचीत करने का मन नहीं था। यों ही पूछ लिया था धनिया के बारे में। बेचैनी कम नहीं रही थी। जोगी रिक्शा खींचते-खींचते फिर गाने लगा था। चौहान को उसका गाना नहीं भा रहा था। चौहान को उसका चश्मा भी नहीं अच्छा लग रहा था। उसका कपड़ा और रिक्शा भी अच्छा नहीं लग रहा था। इन्स्पेक्टर चौहान को जोगी पासवान रिक्शाचालक अच्छा नहीं लग रहा था। उन्हें कुछ नहीं अच्छा लग रहा था। फिर भी वह जोगी को देखे जा रहे थे। उसके कानों पर चढ़े चश्मे की दोनों डंडियों को घूर रहे थे। उसकी चढ़ी हुई आस्तीन को घूर रहे थे। उसके अँगोछे को घूर रहे थे।

"तुम्हारा बहुत ध्यान रखती है। सुंदर भी है।" चौहान फिर बोले।

"ऊँच जात की है... सिंहनी। भगा के लाया हूँ मालिक।" वह दबी हँसी हँसते हुए बोला।

डसके इस वाक्य ने रतन सिंह चौहान को गड़बड़ा दिया। माथे में टन से कुछ हुआ। लेकिन वे गंभीर बने रहे।

"कहाँ से लाया रे भगा के? अपनी जात में नहीं मिली क्या?" कुछ देर बाद वे फिर बोले।

"बताएँ तो हँसिएगा। वहीं इस्लामपुर से। राजकुमार सिंह की रिश्तेदार है। असली नाम सुशीला है, सुशीला सिंह। इसके घर काम करता था मैं। मरने लगी हम पर ससुरी। बोली - भाग चलो नहीं तो जहर खा लेंगे। एक दिन रात में फूट लिये। भागे तो भागे कानपुर पहुँच गये। तीन साल वहीं रहें। जब यहाँ सब ठंडा हो गया तो लौटे। राजकुमार सिंह खून का प्यासा हो गया था।"

"तूने उसका नाम खराब कर दिया... अबे ये धनिया क्या है, वही सुशीला सिंह ही रहने देते।" चौहान ने उसके अँगोछे को घूरते हुए कहा।

"अपने हिसाब से सेट कर लिये हैं ससुरी को। पूरा बदल दिये है।" जोगी हँसने लगा।

"तुम तो पूरे हीरो हो जी जोगी।" चौहान मुस्कराते हुए बोले। बड़ी टेढ़ी-मेढ़ी थी उनकी मुस्कराहट।

"आप बड़न की दया मालिक। बस शौक से रिक्शा चलाते हैं।"

"बड़न की दया की जरूरत तुझे कहाँ जोगी... तू तो खुद बड़ा आदमी है जी... इस्लामपुर वालों की मजाल है सर उठा लें तेरे सामने। पूरे गाँव का दामाद बन गया तू।"

जोगी बस हँस पड़ा। चौहान को अच्छा नहीं लगा।

"मेरे साथ मुंबई चलेगा? चल तुझे पुलिस में भरती करवा दूँ। नहीं तो फिल्म में काम दिलवा दूँगा। राजकुमार की जगह तुझे ले चलने में क्या हर्ज है।"

"मालिक!" जोगी चिल्ला पड़ा और फिर ठठाकर हँसा। देर तक हँसता रहा। फिर उसने अपना गँवई राग छेड़ते हुए रिक्शे की स्पीड बढ़ा दी।

इन्स्पेक्टर चौहान को जोगी का ठठाना अच्छा नहीं लगा। उन्हें उसका उचक-उचककार रिक्शा चलाना भी अच्छा नहीं लगा। वे अगल-बगल कटे खेतों पर नजर गड़ाये बैठे रहे। फिर वे जोगी की पीठ को घूरने लगे। फिर चश्मे की डंडियों को। फिर चढ़ी हुई आस्तीन को। फिर गले में लिपटे अँगोछे को।

फिर उन्होंने धीरे से उसकी पीठ पर अपनी उँगलियों से ठक-ठक किया। जोगी समझ गया। बोला, "अब तेज चलने की कोई जरूरत नहीं। बस सामने बेलागंज तिराहा चौक नजर आ रहा है। एक किलामीटर से भी कम।"

पीठ पर फिर ठक-ठक हुई। जोगी ने पीछे मुड़कर देखा। चौहान अपना रिवॉल्वर तौलिये से पोछ रहे थे।

"रोक दो।" चौहान ने दबे हुए स्वर में कहा।

जोगी ने नहीं सुना। रिक्शे की खड़-खड़ में नहीं सुन सका। अपनी ओर से बोला, "चमका दीजिए मालिक। अच्छा हुआ अपराधियों के चंगुल में नहीं पड़े। नहीं तो यह भी बेचारी...।"

फिर ठक-ठक।

इन्स्पेक्टर चौहान गुर्राये, "रोक बे साले, रिक्शा रोक।"

"बाप रे बाप... गुस्सा गये साहेब... पेशाब करेंगे क्या... लीजिए... ये ब्रेक।"

"उतर रिक्शे से मादर..."

"आयँ... क्या हो गया साहेब को!" वह हँसने लगा। फिर बोला, "अच्छा तो हजारों का नुकसान करा दिये हम... इसीलिए आग-बबूला हो रहे हैं।"

"हीरो बनता है साला... उतर साले... नीचे आ।" इन्स्पेक्टर चौहान का दाहिना हाथ जोगी के कालर पर था। उनकी आँखों में खून उतर आया था। उन्होंने उसे खींचा। वह गिरते-गिरते बचा फिर जल्दी से उतरकर खड़ा हो गया। चश्मा अभी भी आँखों पर चढ़ा था।

"आस्तीन ठीक कर... बटन लगा बे..." चौहान ने अपने हाथ से ही आस्तीनें नीचे कर दीं। जोगी सकपका गया था। चौहान ने जोगी का दाहिना हाथ पकड़ा कलाई के पास, फिर बोले - "रिक्शा छोड़ यहाँ, चल मेरे साथ।"

"मालिक, कोई गलती हुई क्या? मालिक... आप हाथ छोड़ें... हम चल रहे हैं... चलते हैं... क्या हुआ साहेब?"

चौहान के हाथों का दबाव जोगी की कलाई पर बढ़ गया था... जकड़ लिया था उन्होंने जोगी को... आगे की ओर धकेले लिये जा रहे थे।

"ऐसा क्यों कर रहे हैं मालिक... आप बैठिए न रिक्शे पर हम खींचते हैं... बस सामने ही तो है चौक...।"

"चश्मा उतार के बात कर बे... उतार तेरी माँ की... चश्मा हटा आँख से...। और ये लाल-पीला अँगोछा हटा गर्दन से... हटा। साले ...फेंक।"

"धूप बढ़ गयी है मालिक... क्या हुआ चश्मे को...। यही चश्मा और अँगोछा तो लू से जान बचाते हैं।"

"चोर... मांचो... साले... हत्यारे उतार चश्मा को...। देखता हूँ कौन बचाता है लू से बैंचो...।

जोगी ने चश्मा नहीं उतारा। उन्हें घूरने लगा... घूरे जा रहा था...।

इन्स्पेक्टर चौहान ने जोगी के गाल पर एक जोरदार हाथ मारा... इतने जोर का कि जोगी चकरा गया... अगल-बगल के खेत पेड़-पौधे नाचने लगे... आँखों के सामने

अँधेरा छा गया... चिनगारियाँ उड़ने लगीं... चश्मा दूर जा गिरा। जोगी बैठ गया... फिर औंधे मुँह गिर पड़ा। फिर कराहते हुए बैठ गया।

"क्या हुआ मालिक, ऐसा क्यों कर रहे हैं... पैसा न दीजिए... इनाम न दीजिए... पर मारे क्यों... काहे के लिए मार रहे हैं। चश्मा भी तोड़ दिये...।"

धीरे-धीरे वह खड़ा हो गया। चौहान उसकी कलाई पकड़कर फिर चौक की ओर खींचने लगे। चौक करीब आ गया था... चौक से कुछेक लोग उन दोनों की तरफ देख रहे थे। जोगी जोर लगाकर रुक गया।

"मारिए मत... क्या बात है बताइए... मेरी क्या गलती है?" उसकी आवाज में कुछ अकड़ थी।

इन्स्पेक्टर चौहान ने दूसरा हाथ मारा। पहले जैसा ही झन्नाटेदार। इस बार जोगी गिरा नहीं। चौहान ने गालियों की बौछार के साथ लात-घूँसों की झड़ी लगा दी। पर वह गिरा नहीं। वह खड़ा ही रहा। मार खाता रहा। इन्स्पेक्टर चौहान उसे पकड़े हुए चौक पर पहुँच गये थे। वे एक बार फिर गरजे, "मांचो... साला... मर्डर करके यहाँ छुपा है... गैंग में काम करता है... सुपारी लेता है बैंचो... बीस हजार का इनाम है साले के ऊपर... पुलिस से कैसे बचेगा साले... भाग रहा था मांचो... घुसा दूँगा साले पूरी रिवाल्वर अंदर... चल साले मुंबई की जेल की हवा खा... चल अपने असली घर तब पता चलेगा...।"

जोगी के मुँह और नाक से खून बहकर उसके कपड़ों पर गिरने लगा था।

चौहान ने रिवाल्वर जोगी के कनपटी से सटा दिया। जोगी काँपने लगा। थर-थर। जैसे जूड़ी आयी हो। उसे कुछ नहीं पता चला उसके साथ क्या हो रहा है।

इन्स्पेक्टर चौहान ने बेलागंज चौक की ओर जा रहे टेंपो को रिवाल्वर वाला हाथ दिखाया। टेंपो ड्राइवर ने उनके पैरों के पास लाकर गाड़ी रोक दी। जोगी समझ गया, उसे इसी में बैठना है। वह बिना किसी प्रतिरोध के टेंपो में बैठ गया। इन्स्पेक्टर चौहान भी गाली बकते हुए सटकर बैठ गये। उनके हाथ का दबाव जोगी की कलाई पर कम होने का नाम नहीं ले रहा था।